RESEARCH HUB – International Multidisciplinary Research Journal (RHIMRJ)
Research Paper

भारत में महिलाओं के सशक्तिकरण के विभिन्न आयाम

डॉ0 ममता कुमारी

इतिहास विभाग, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

प्राचीनकाल का 'विश्वगुरू' भारतवर्ष आधुनिक काल में भी एक प्रखर एवं भव्य शक्ति के रूप में समाहृत है। आज इस महान देश को अपने ऊपर गर्व करने का कतिपय आधार हैं। लोकतंत्र के आदर्श को जीवंत रूप देने की बात हो या आर्थिक प्रगति की मिशाल कायम करने की, विज्ञान एवं तकनीकि के हर क्षेत्र में चन्द्रमा तक कदम पहुँचने की बात या खेल के क्षेत्र में उत्कृष्ट प्रदर्शन की, हर क्षेत्र में भारत नया कीर्तिमान स्थापित कर रहा है। भारत की यह चतुर्दिक प्रगति हमें अपनी मातृभूमि पर गर्व करने की प्रेरणा देती है।

नित्संदेह हम प्रगति के पथ पर चलायमान हैं फिर भी एक जीवंत देश की आवश्यकता के अनुरूप हमें आत्मनिरीक्षण की भी आवश्यकता है। एक सभ्यता या देश की जीवंतता के लिये अपरिहार्य है कि हम सदैव आगे रहें। अपनी कमियों को ढूंढे, न कि केवल अपनी प्रगति का प्रशस्ति गान करते हुए आत्मविभोर होते रहें। इस लिहाज से यदि तथ्यों पर हम गौर करते हैं तो प्रगति के समानानतर कमियाँ भी सर्वाधिक पीड़ायद हैं हमारे समाज में नारियों की स्थिति। हमारे समाज में नारियों की स्थिति भेदभावपूर्ण और शोचनीय है। यहाँ यह तथ्य भी द्रष्टव्य है कि भेदभव के संदर्भ में नारियाँ वर्गविहिन हैं। भेदभाव के मामले में थोड़ा बहुत परिणामात्मक अंतर भले हो सकता है, लेकिन यह एक कटु सत्य है कि अवर्ण से लेकर सवर्ण तक की महिलायें इस दंश को झेल रही हैं।

हिन्दू धर्म के अतिरिक्त भारत में अवितरित बौद्ध एवं जैन जैसे क्रांतिकारी धर्मों ने भी कोई अलग नजरिया नहीं रखा। इन धर्मों ने स्त्री को भिक्षुणी बना कर स्वायत्त जीवन जीने की स्वतंत्रता तो दी परंतु इसके उनके बारे में न तो प्रचलित धारणा ही बदली और न ही उनको इंसानी दर्जा मिला। गौतम बुद्ध भी स्त्री को सारे पापों की जड़ ही मानते थे। मसलन उन्होंने अपने शिष्य आनंद को स्त्रियों को संघ में प्रवेश नहीं देने के कारण, उनका (स्त्रियों का) धर्म के रास्ते में रोड़ा होना बतलाया। भिक्षुणी की उपस्थिति भिखु के लिए खतरा मानी गई।

धर्मशास्त्रों के अतिरिक्त भारतीय दर्शन की मान्यता नारियों के प्रति लैंगिक भेदभाव से अछूता नहीं है। अद्वैत वेदान्त एवं सांख्य दर्शन की मान्यता इस संदर्भ में उल्लेखनीय है। अद्वैत वेदान्त एवं सांख्य क्रमशः माया एवं प्रहति को जीवन व पुरूष के बंधन का कारण मानता है लेकिन माया एवं प्रहति का वर्णन स्त्रीलिंग में करता है। 'ब्रह्मने एवं पुरुष' पुल्लिंग हैं अर्थात् मुक्ति की बात सिर्फ पुरूषों के लिये की गईं इतना ही नहीं मुक्ति की राह में बाधा नारियों को माना गया।

उपरोक्त विवेचन इस सत्य को उद्घटित करता है कि नारियों की स्थिति प्राचीनकाल से ही भारतीय समाज में दोयम दर्जे की रही है। ग्रंथों में नारियों के संदर्भ में जो प्रशंसनीय वक्तव्य उपलब्ध भी हैं, उनका संबंध सामाजिक यथार्थ से नहीं है। वस्तुतः उनका संबंध पितृसत्ता के संरक्षण से है। उन्हीं नारियों को 'देवी' की उपाधि से महिमामंडित किया गया या पूजा के योग्य माना गया जो पितृसत्तावादी मूल्यों को स्वीकार करते हुए घर की चाहरदीवारी में अलंकारिक अस्तित्व के रूप में रहने के लिये सहमत हुईं। धर्मग्रंथों में नारियों का महिमामंडन वस्तुतः इसी संदर्भ में समझा जा सकता है।

इस प्रकार भारतीय नारियों की शोचनीय स्थिति प्राचीनकाल से ही एक वास्तविकता है। वस्तुतः लैंगिक भेदभाव या लैंगिक असमानता एक सार्वकालिक और सार्वदेशिक सच्चाई है। भारतीय नारियों की स्थिति को इस वैश्वक सच्चाई से ही जोड़ कर सकझा जा सकता है। नारी और पुरुष के जीव वैज्ञानिक भेद के आधार पर इनके बीच सैद्धांतिक एवं सांस्कृतिक भेद को स्वीकार करने की वैश्विक परंपरा रही है।

भारत के आजाद होते ही अन्य वर्गों की तरह भारतीय नारियों के मन में भी नवीन आशाओं का संचार हुआ। भारतीय मुक्ति संग्राम का ढर्रा ऐसा था कि यह सिर्फ ब्रिटिश से मुक्ति का संग्राम नहीं था बल्कि इसमें प्रारंभ से ही एवं गाँधी के आगमन के बाद विशेष रूप से भारतीय समाज की अंदरूनी समस्याओं को भी स्थान मिला था। भारत का मुक्ति संग्राम अपने अंदर की सामाजिक दुरव्यवस्थाओं से मुक्ति का भी संग्राम था। इसीलिये ऐसी आशाओं का उत्पन्न होना अस्वाभाविक भी नहीं था। आजाद होते ही लोकतांत्रिक शासन प्रणाली को स्वीकार करने एवं लिखित संविधान को अंगीकार करने एवं इसमें लोककल्याणकारी राज्य की स्थापना की स्वीकृति ने इन आशाओं को पुष्ट करने का काम किया। लेकिन बाद की स्थिति की समीक्षा करने से यह कटु

सत्य प्रकट होता है कि भारतीय स्त्रियों की आशायें पूर्ण नहीं हो सकीं। सदियों का शोषण समाप्त नहीं हो सका। आजाद भारत में भी वे पुरूषों के वर्चस्व को चुनौती नहीं दे सकीं। संविधान में भारतीय नारी की समस्या को विशेष परिप्रेक्ष्य में नहीं देखा गया। यद्यपि अनुच्छेद–15 में समानता के सिद्धांत को स्वीकृति दी गई, लेकिन साथ ही धार्मिक समुदायों के व्यक्तिगत कानूनों को भी स्वीकार कर लिया गया जो समानता के सिद्धान्त का स्वभावतः विरोधी था। संविधान में समान काम के लिये समान पारिश्रमिक की नीति–निर्देशक वाले खं डमें रख कर इसे भविष्य के लिये छोड़ दिया गया।

इस प्रकार भारतीय नारियों का ऐतिहासिक सर्वेक्षण इनकी वास्तविक को उद्घाटित करता है। समाज के ऊपरी वर्गों की महिलाओं में अवश्य कुछ सुधार हुआ है लेकिन अब भी वे पितृवादी घेरे के बाहर नहीं हो सकी हैं। निर्णय का अधिकार अब भी इन्हें प्राप्त नहीं है। अन्य निम्नवर्गीय महिलाओं की स्थिति तो सहज रूप से आकलन के योग्य है।

महिलाओं की दयनीय स्थिति के इस ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में महिला सशक्तिकरण की अवधारणा को समझा जा सकता है। आज महला सशक्तिकरण का नारा एक वैश्विक सच्चाई है। भारत में भी इस अवधारणा का प्रचुर प्रयोग हो रहा है। सशक्ति अवधारणा को समझने के लिए इसके अर्थ, इसकी आवश्यकता और इसके महत्व को समझना आवश्यक है।

साधारणतः सशक्तिकरण का अर्थ होता है शक्तिहीन को शक्ति से युक्त करना। महिलाओं के संदर्भ में सशक्तिकरण का अर्थ है संसाधनों पर उनका नियंत्रण तथा निर्णय का अधिकार। वस्तुतः सशक्तिकरण के अर्थ को स्पष्ट कने के लिए आवश्यक है महिलाओं की सैद्धांतिक और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में उनकी दयनीय स्थिति को समझना।

इस प्रकार महिला सशक्तिकरण महिलाओं के प्रति हुए ऐतिहासिक अन्याय को समाप्त करने में सक्षम होगा। यहाँ सशक्तिकरण के विभिन्न आयामों पर भी दृष्टिपात करना उचित होगा। उल्लेखनीय है कि शक्ति कोई वस्तु नहीं है जिसका आदान–प्रदान किया जा सकता है। उल्लेखनीय है कि शक्ति कोई वस्तु नहीं है जिसका आदान–प्रदान किया जा सकता है। शक्ति वस्तुतः एक आंतरिक ऊर्जा है जिसे प्राप्त किया जा सकता है। इसे बाहर से थोपा नहीं जा सकता है। पुनः यह एक प्रक्रिया है जिसे एक प्रक्रिया के रूप में ही उत्तरोत्तर ग्रहण किया जा सकता है। साथ ही यह कोई एकल परिघटना नहीं है बल्कि एक संबद्ध श्रृंखला है। इसलिये सशक्तिकरण की सार्थकता के लिये आवश्यक है इसे मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में स्वीकार करना। इस दृष्टिकोण से महिला सशक्तिकरण के विभिन्न आयाम हैं :

आर्थिक सशक्तिकरण :

महिलाओं का आर्थिक रूप से सुदृढ़ होना महिला सशक्तिकरण का आधारभूत तथ्य है, क्योंकि पुरूषों का महिलाओं पर वर्चस्व होने में महिलाओं की आर्थिक आश्रितता की प्रमुख होती है। इसलिये आर्थिक रूप से महिलाओं को सबल बनाने की सबसे बड़ी आवश्यकता है। इसके लिये भू एवं वन संसाधनों पर उनकी कानूनी हक को सुनिश्चित करने की आवश्यकता है विशेषकर आदिवासी महिलाओं के संदर्भ में यह काफी महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त उन्हें शिक्षा एवं तकनीकी कुशलता से मुक्त करने की आवश्यकता है ताकि अधिक पारिश्रमिक वाले कार्यों में उनकी भागीदारी सुनिश्चित हो सके।

राजनीतिक सशक्तिकरण :

भारत में राजनीति परिवर्तन का महत्वपूर्ण माध्यम है। इसलिये राजनीतिक प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी ऊपर से एक वातावरण सृजित करने में सफल हो सकती है वहाँ महिलाओं के बुनियादी सवालों पर विमर्श किया जा सकता है। राजनीतिक भागीदारी एक उत्प्रेरक की भूमिका निभा सकती है। इनकी राजनीतिक भागीदारी से महिलाओं से जुड़े सवाल को राष्ट्रीय नीति में केन्द्रीय स्थान मिलना आसान हो जायेगा।

समाजिक सशक्तिकरण :

यह पहले ही जिक्र किया जा चुका है कि महिलाओं की दोयम दर्जे की हैसियत को निर्धारित करने में परिवार एवं अन्य सामाजिक प्रथाओं की भूमिका सर्वोपरि रही है। पितृसत्तावादी मूल्यों के विकास एवं संरक्षण में समाज की ही महत्वपूर्ण भूमिका होती है। स्त्रियों की पराधीनता की कथा यहीं से प्रारंभ होती है। इसलिये महिलाओं का सामाजिक सशक्तिकरण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है ताकि समाज में उनकी गरिमा बहाल हो साथ ही पुरूषों के वर्चस्व को सैद्धान्तिक सहमति देने वाली विचारधारा को समाज के अन्दर से ही चुनौती मिल सके।

धार्मिक सशक्तिकरण :

भारत के सामाजिक जीवन में धर्म की केन्द्रीय भूमिका रही है। धर्म ने महिलाओंा की गौण सामाजिक भूमिका में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। धार्मिक कर्मकाण्डों एवं धार्मिक नैतिकताओं ने उन्हें हाशिये पर पहुँचा दिया। इसलिये इस बात की भी महत्ती

आवश्यकता है कि महिला धर्म के बाहरी स्वरूप एवं कर्मकाण्ड के आडंबर की वास्तविकता को समझे। उसे चुनौती दे एवं धर्म के आंतरिक मर्म को अंगीकार करे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. गेपा जोशी : भारत में स्त्री असमानता : एक विमर्श, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2006, पृ. 28।
2. सुभद्रा मिश्र चानना, द आइडियल वीमेन : सोशल इमेजिनेशन एवं लिब्ड रियलटीज।
3. जेनट ह्यूबर लॉरी : सिमेन्ट स्टडीज ऑन मेडियन वीमेन, जयपुर, पृ. 38।
4. डी. एन. झा एवं के. एम. श्रीमाली : प्राचीन भारत का इतिहास, दिल्ली, 1981, पृ. 125।
5. साधना आर्य : वीमेन, जेन्डर इक्विलिटी एण्ड द स्टेट, दिल्ली, 2000, पृ. 16।
6. सुषमा सहाया : एम्पावरमेण्ट ऑफ वीमेन : एप्रोचेज एण्ड स्ट्रेटजी, हैदराबाद, पृ. 1।
7. सुजाता मसेक : एम्पावरमेण्ट ऑफ वीमेन , 2006।
8. साधना आर्य, निवेदिता मेनन, जिनी लोकनीता : नारीवादी राजनीति, दिल्ली, 2007।
9. वी.आर. नंदा : इंडियन वीमेन फ्रॉम पर्दा टू मॉडरनिटी, दिल्ली, 1976।